विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. NSK-64

वर्ष ९ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२४ • ज्येष्ठ पूर्णिमा [शक] • दि. २९-५-१९८० • अंक १२

मृत्यु मंगल

विपश्ययी साधकके लिए मृत्यु मंगल है ! अमंगल नहीं ! सुहावनी है ! भयावनी नहीं ! अभिनंदनीय है ! तिरस्करणीय नहीं ! जब समय पकता है और आयु-संस्कार पूरे होते हैं तो शरीर-च्युति अवश्यम्भावी है। नियतिके इस अटूट नियमको कोई नहीं टाल पाता। परिपक्व साधक इस अपरिहार्य मृत्यु-क्षणको मुस्कराता हुआ वरण करता है। चित्तधारापर रंचमात्र भी भय नहीं होता, शोक नहीं होता, घबराहट नहीं होती। मृत्युके समय यदि पीड़ा हो तो भी चित्त विचलित नहीं होता। जैसे अधिष्ठान में बैठा हुआ शारीरिक पीड़ाएँ हों तो भी चित्त विचलित नहीं होने देता वैसे ही यदि मृत्युके समय पीड़ा हो तो भी अविचलित रहता है। सजग सचेत रहता है। अनित्य बोधकी चेतना बनी रहती है। ऐसे चित्त-क्षणमें जब च्युति होती है याने शरीर छूटता है तो अगले क्षणकी प्रतिसंधि याने अगले जीवनका प्रथम चित्त निस्संदेह किसी सद्गतिके क्षेत्रमें ही होता है। दुर्गतिकी किंचित भी आशंका नहीं।

जो साधक जबसे विपश्यना मिली तबसे लेकर शेष जीवन पर्यन्त विपश्यनाका अभ्यासी रहता है, वह सद्धर्मका पथिक है। "ओप्पनेयिको" याने कदम-कदम आगे ही बढ़नेवाला है। मृत्यु उसकी प्रगतिको रोकती नहीं। मृत्युकी वजहसे चित्तधारामें धर्मचेतनाका अवरोध नहीं होता। प्रगति कायम रहती है। निष्ठावान साधकके लिए धर्म-साधनाका "ओप्पनेयिको" स्वभाव मृत्युके क्षण सहायक बनकर उपस्थित हो ही जाता है। उन्नत भविष्य सुरक्षित होता है। सद्गति सुनिश्चित होती है।

इसीलिए सच्चे साधकको मृत्युका भय नहीं रहता। वह न तो जीवनसे घृणा करता हुआ मृत्युकी कामना करता है और न ही जीवनसे आसक्त होकर मृत्युसे घबराता है। पूर्णतया विश्वस्त रहता है कि मृत्यु पदोन्नति है, प्रोमोशन है। अतः प्रसन्नताका विषय है, शोकका नहीं, विलापका नहीं। विपश्यी साधक जीवन जीनेकी कला सीखता है। जीवन जीनेकी कला में ही मंगल मृत्युकी कला समायी हुई है। फिरभी मरणासन्न विपश्यीके निकट जो अन्य साधक हों उन्हें उसकी सहायता करनी चाहिए। सारे वातावरणको समतामयी धर्मचेतना से परिप्लावित रखना चाहिए। यदि कोई अस्थिर चित्त और दुर्बल हृदयका आँसू बहानेवाला व्यक्ति पास हो तो उसे शीघ्र दूर हट जाना चाहिए ताकि वह मरणासन्न व्यक्तिकी महत्वपूर्ण च्युति-चित्त-संततिको दूषित कर देनेका कारण न बन जाय। मरणासन्न व्यक्ति बहुत पका न हो तो कहीं अपने परिवारके किसी व्यक्तिको शोकाकुल देखकर स्वयं शोकग्रस्त न हो जाय और अपना परलोक न बिगाड़ ले। सभी उपस्थित साधकोंको चाहिए कि उस समय मरणासन्न व्यक्तिके आस-पास बैठकर विपश्यना करें। अनित्यबोधिनी-चेतनाकी धर्म तरंगोंका प्रजनन करें अथवा रोगीके प्रति मंगल मैत्रीका। उस समय सारा वातावरण धर्मचेतनाकी विद्युत तरंगोंसे ही उर्मिल रहना चाहिए।

मृत्युके पश्चात् भी कोई रोए नहीं, विलाप नहीं करे। बल्कि मृतकी सद्गति पर चित्तको प्रसन्न ही रखे। उसके प्रति मंगल मैत्री ही प्रजनन करे। उसे अपना पुण्य वितरण ही करे। इससे मृत व्यक्ति जहाँ कहीं जन्मा हो, उसकी चित्तधारामें धर्मचेतनाका ही स्पर्श होता है और परिणामतः उसकी चित्त-चेतना प्रशांत, प्रसन्न, प्रफुल्ल रहती है। शोक और विलाप करनेसे अपने चित्तकी दुःखजन्य तरंगे अपने प्रिय मृत व्यक्तिकी चित्तधाराको शोक-संतप्त करती हैं। उसे व्याकुल बनाकर उसकी सुख-शांतिका हनन करती हैं। न स्वयं शोक-संकुल हो और न ही किसी अन्यके शोकका कारण बने। स्वयं प्रसन्नचित्त रहे और अन्यकी चित्त-प्रसन्नताका भी कारण बने। मंगल-मृत्युका यही मंगल विधान है।

मंगल मित्र
स. ना. गो.

धम्म वाणी

मरणे मे भयं नत्थि, निकन्ति नत्थि जीविते।
सन्देहं निक्खिपिस्सामि, सम्पजानो पटिस्सतो॥

थेर गाथा–२०

न मुझे मरनेका भय है, न जीनेकी कामना। (जब समय आयेगा) मैं इस देहको स्मृति और सम्प्रज्ञा (जागरूकता और तटस्थता) के साथ त्याग दूँगा।

वर्षा-ऋतु के स्वयं-शिविर

इगतपुरी में जून के प्रथम सप्ताह से बरसात आरंभ हो जाती है और पूरे ४ महीने तेज गति से होती रहती है। फिर भी विद्यापीठ में स्वयं-शिविर की समुचित व्यवस्था रहती ही है। अतः पुराने साधक अपनी सुविधानुसार पूर्व सूचना देकर आ सकते हैं और अपना विपश्यना–अभ्यास पुष्ट कर सकते हैं।

व्यवस्थापक

कुछ विशिष्ट साधकोंका स्वर्गारोहण

यह संयोगकी ही बात है कि पिछले दिनों चार ऐसे साधक/साधिकाओंके निधन के समाचार मिले जो विपश्शना के निरंतर अभ्यास द्वारा न केवल अपने इस जीवनको सुखमय बना सके बल्कि शांत चित्तसे मृत्युको भी वरण कर सके। यह अवस्था निश्चयही उनकी सद्गति की परिचायक है। उनकी इस सुखमय मृत्युसे हमें भी धर्ममय जीवन जीने की प्रेरणा मिले, इस निमित्त संक्षिप्त विवरण नीचे प्रस्तुत हैं :-

श्रीमती मोहिनीदेवी राठीका स्वर्गवास

नासिक निवासी श्री शिवनारायणजी राठी (बाबूसेठ राठी) की धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनीदेवीका गत ४ अप्रैल, १९८० को ५६ वर्षकी अवस्थामें हृदयगति बंद हो जानेके कारण देहावसान हुआ। सुबह अचानक ही हृदयका पहला दौरा पड़ा और तुरन्त अस्पताल ले जाया गया। वहां १०-३० बजे तक होशमें आ गयी और चेहरे पर संतोष छलक आया। पूर्ण अनासक्तभावसे पूरा दिन बीत गया। किसी प्रकारकी कोई कामना नहीं प्रकट की। सबको संतोष था कि रोग काबूं में है। परन्तु सायंकाल ७ बजे पुनः दूसरा दौरा पड़ा और एक झटकेके साथ शरीर शांत हो गया।

आप १९७१ में बम्बईकी एक धर्मशालामें लगे शिविर क्रमांक ३० में अपने पतिके साथ सम्मिलित हुई थी और तत्पश्चात् अन्य अनेक शिविरोंमें भी सम्मिलित होकर धर्मलाभ लेती रही। उन्होंने घर पर भी अभ्यासकी निरंतरता कायम रखी। परिणामस्वरूप साधनाका प्रभाव अंतिम क्षण तक बना रहा। मृत्युके समय मुखमंडल बड़ा शांत और प्रसन्न रहा और सचेत अवस्थामें अंतिम सांस छोड़ सकी। मृत्युके बाद उनके चेहरेकी प्रशांत प्रफुल्लताको देखकर लोग बहुत प्रभावित हुए।

श्रीमती मोहिनीदेवी कोलिन्डेवालाका स्वर्गवास

बाराचकिया निवासी श्री शोभारामजी कोलिन्डेवालाकी लगभग ७० वर्षीया धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनीदेवीका भौतिक शरीर गत ४ मई १९८० को शांत हुआ। आपका पूरा परिवार बर्मामें बसा हुआ था। वहां रहते हुए आजसे लगभग २० वर्ष पूर्व श्रीमती मोहिनीदेवीके मनपर एक गहरा आघात लगा जबकि उनका एक युवा पुत्र जिसकी कि दो-तीन दिन पश्चात् ही शादी होनेवाली थी, दुर्घटनाका शिकार हुआ और पानीमें डूबकर मर गया। इस असह्य आघातने उन्हें विक्षिप्त कर दिया था। अतः उस महान दुःखसे निकलनेके लिए उनके परिवारवाले उन्हें स्व. सयाजीके आश्रममें साधना करानेके लिए ले गए; जहां अभ्यास करती हुई न केवल उस दुःखसे मुक्त हो सकीं बल्कि कुछ दिनों पश्चात् निर्वाणके परमसुखका भी साक्षात्कार कर सकीं। यहां आने पर प्रतिकूल परिस्थितियोंमें लंबे अंतरालके बाद स्वभावतः इनकी साधना कुछ मंद पड़ गयी। पू. गुरूजीने १९६९ से जब विपश्यनाकी धर्मचारिकाका श्रीगणेश किया तभीसे इनके विपश्यना प्रेमी परिवारने अपने यहां शिविर लगाने का आग्रह करना शुरू किया और परिणाम स्वरूप मार्च ७० में बाराचकियामें १३ वां शिविर आयोजित हुआ। उस समय उनके परिवारके अनेक सदस्योंने भाग लिया तथा अन्य अनेक स्थानीय साधकोंके साथ स्वयं भी अपनी सुसुप्त साधनाका पुनरुत्थान कर सकीं। कुछ समय बाद वहीं पर लगे एक अन्य शिविरमें पुनः सम्मिलित होकर अन्त तक अभ्यासकी निरंतरता कायम रख सकी। श्रीमती मोहिनीदेवी न केवल स्वयं साधनाका लाभ लेती रही बल्कि बाराचकिया (बिहार) की सभी विपश्यी साधिकाओंके लिए प्रेरणाका श्रोत बनी रहीं। परिणामतः जीवनके अंतिम क्षणोंमें अत्यंत शांत रहकर अंतिम सांस छोड़ सकी। यह अवस्था निश्चितहीं उनकी सद्गतिकी परिचायक है।

श्री नानजीभाई शाहका स्वर्गवास

नागपुर निवासी ६४ वर्षीय श्री नानजी नागसी शाहका गत ४ मईको अचानक पक्षाघातके आक्रमण हो जानेके कारण निधन हो गया। आप कुछ समयसे हृदय रोगसे पीड़ित थे। गत फरवरी महीनेमें जब पू. गुरुजीका स्वयं-शिविर था तो उस समय आपभी सम्मिलित हुए थे। उस समय एक हलकासा हृदयका दौरा पड़ा परंतु विपश्यनाके अभ्यासके कारण मन दृढ़ था। अतः थोड़ी देर बादही स्वतः सामान्य अवस्थामें आ गए थे और शिविर पूरा करके ही घर लौटे थे।

जन परंपराके अनुगामी आपके परिवारमें विपश्यनाका प्रवेश सर्वप्रथम मार्च १९७३ में भद्रेश्वर (कच्छ) में लगे ८२ वें शिविरमें सम्मिलित आपकी धर्मपत्नी श्रीमती केसरबेन एवं छोटे भाई श्री वसनजीभाईके जरिए हुआ। आप स्वयं मई १९७४ में बम्बईके सोमैया कालेजमें लगे शिविरमें सम्मिलित हुए और तबसे लेकर अब तक अनेक शिविरोंमें भाग ले चुके थे। धीरे-धीरे आपका सारा परिवार "विपश्यना" की धर्मगंगामें डुबकी लगाने लगा। विपश्यनाके प्रचार-प्रसारमें आप तथा आपके परिवारका बहुत बड़ा सहयोग रहा है।

कच्छी बीसा-ओसवाल समाजमें जन्मे श्री नानजीभाई बचपनसे ही बड़े तीक्ष्ण-बुद्धि थे। अपनी निष्ठा व लगनसे ही इंजीनियर बनकर महाराष्ट्र सरकारके अनेक जनहितकारी निर्माण-कार्योंको पूरा करनेमें आपने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कुशल कर्मठताके कारण अवकाश-मुक्त होनेपर भी सरकार पुनर्नियुक्ति करती ही गई परन्तु कमजोर स्वास्थ्यके कारण अन्ततः जबरन त्यागपत्र देकर सरकारी पदसे मुक्त हो सके और शेष जीवन विपश्यनाके अभ्यासमें बितानेका निर्णय किया। श्री नानजीभाईका अधिकांश समय म. प्र. के शीतल स्थान पंचमढ़ीके निजी निवासपर विपश्यनाके अभ्यासमें ही बीतता रहा। परिवारके पैतृक व्यवसायमें लगे अपने पुत्र व भाईयोंको भी समय-समयपर मार्गदर्शन देते रहते थे।

मृत्युके कुछ समय पूर्व जबकि पक्षाघातकी अत्यधिक पीड़ाके कारण उन पर बेहोशीका दौर छाया हुआ था, नागपुरसे यहाँ धम्मगिरिपर पू. गुरुजीके लिए उनके परिवारकी ओरसे फोन आया। पू. गुरूजीने मंगल मैत्री भेजी और उनकी शैयाके आस-पास केवल धर्ममय वातावरण बनाए रखनेका निर्देश दिया। इससे उनकी धर्मचेतना लौटी जो अंतिम क्षण तक कायम रही। इस विषयमें उनके भाई श्रीवसनजीके पत्रका कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत है :-

"पू. नानजीभाईकी अंतिम अवस्था बहुतही अच्छी रही। आपसे फोनपर बात करनेके पश्चात् जब मैं अस्पताल गया तब बेहोशी दूर हो गई थी। ऑख खोली, पानी पिया, सबको देखा। जिस दाहिनी ऑखपर लगवा था वह भी खुलती थी, बंद होती थी। शांतिबेन (उनकी सुशिक्षित ब्रम्हचारिणी बहन जो कि विपश्यनाकी एक उत्कृष्ट साधिका है और महिलाओंको विपश्यना सिखानेमें पू. गुरुजीकी सहायिका है) ने पूछा "मैं जो धर्म सुना रही हूँ वह समझमें आ रहा है?" उन्होने कहा– "समझमें आ रहा है" शांति सतत् धर्मवाणी सुना रही थी। दो घंटेकी स्थितिके पश्चात् शनैः शनैः पाँव ठंडे पड़े, बादमें हाथ ठंडे पड़ गए। अंत तक केवल मस्तिष्क गरम रहा और दोपहर २:३० बजे श्वास बंद हो गया।

आपकी मंगल मैत्रीका प्रभाव स्पष्ट दिखाई दे रहा था।....."

इतने कष्टके बावजूद ऐसी सचेतन मृत्यु निश्चितही हमारे लिए प्रेरणास्रोत है।

पू. गुरूजीकी जननी श्रीमती कमलादेवी गोयन्काका स्वर्गवास

अत्यंत पुण्यशालिनी माता श्रीमती कमलादेवीका ८२ वर्षकी पकी हुई अवस्थामें गत १४ मई, १९८० को मद्रासमें देहावसान हुआ। "विपश्यना" साधनाकी धर्मगंगाको भारत वापस लानेमें निमित्त बननेका श्रेय प्रमुखरूपसे इन्हींको है। क्योंकि ११ वर्ष पूर्व सन् १९६९ के जून महीनेमें उनके अस्वस्थ हो जाने पर उनकी सेवाके लिए ही पू. गुरुजीको बर्मी सरकारने भारत आनेकी अनुमति दी थी और पासपोर्ट प्रदान किया था।

जुलाई १९६९ में भारतमें जो पहला शिविर बम्बईकी पंचायतिवाड़ी धर्मशालामें लगा वह मुख्यतः माताजीके लिए ही था। उसमें गुरूजीके पिताजी स्व. श्री गोपीरामजी गोयन्का भी सम्मिलित हुए तथा परिवारके कुछ अन्य सदस्यों सहित कुल मिलाकर १४ लोगोंने भाग लिया। इस प्रथम शिविर की सफलताने इस परंपराको आगे बढ़ानेका उत्साह पैदा किया जिसके परिणाम आज हमारे सामने हैं। इस समय यहाँ धम्मगिरिपर १७७ वाँ शिविर चल रहा है जिसमें कि देश-विदेशके कुल मिलाकर २५५ व्यक्ति साधनारत हो धर्मलाभ ले रहे हैं।

विलक्षण तपस्विनी माता कमलादेवीने न केवल भौतिक सुख-संपदाका भरपूर उपभोग किया बल्कि आध्यात्मिक क्षेत्रमें भी विपश्यनाकी अद्भुत ऊंचाई उपलब्ध की। बर्मामें ही रहते हुए परम पूजनीय सयाजी ऊ बा खिनसे विपश्यना सीखनेके पश्चात् वहाँके अनेक शिविरोंमें सम्मिलित होकर नियमित अभ्यास करती रहीं। परन्तु भारत आने पर वातावरण बदलने तथा अन्य अनेक कारणोंसे अभ्यास मंद पड़ा और कुछ शारीरिक व मानसिक अस्वस्थता रहने लगी। यह अवस्था पू. गुरुजीके लिए असह्य हुई और उन्होंने भारत आकर माताजीकी सुसुप्त धर्मचेतनाको जाग्रत करनेका शुभ संकल्प किया। उस समय तक वे विपश्यनामें परिपुष्ट हो चुके थे। अतः सयाजीने उन्हे विधिवत् आचार्यपद पर प्रतिष्ठित कर यात्राकी सफलताके लिए आशिर्वाद प्रदान किया। इस प्रकार वे अपने माता-पिताकी धर्मसेवा करके मातृ-पितृ-ऋणसे उऋण हो सके।

माताजी अपने पीछे अनेक पुत्रों, पुत्रियों, पौत्रों एवं प्रपौत्रोंका भरा-पुरा सुखी-संपन्न परिवार छोड़ गई हैं। पिछले कुछ दिनोंसे अपने प्रथम दो पुत्रोंके साथ रहनेके लिए मद्रास चली गई थी और वृद्धावस्थाकी अत्यंत कमजोरीके कारण वापस बम्बई नहीं लौट सकी। उसके पूर्व बम्बई रहते हुए जब तक उनका स्वास्थ्य सामान्य रहा, बम्बईके शिविरोंमें लगातर भाग लेती और साधना पुष्ट करती रहीं। एक बार तो लंबी यात्राका कष्ट सहकर वाराणसी व बोधगयाके शिविरोंमें भाग लेने गई। उस समय गुरूजीके स्वयं-शिविरमें सम्मिलित होकर कठोर व्रतोंका पालन कर सकीं। मद्रास रहते हुए घर पर नित्य नियमित साधना करती रही। यदा-कदा मद्रासके अन्य विपश्यी साधक भी सामूहिक साधनामें साथ देते थे। अच्छा संयोग रहा कि पिछले दिनों श्रीलंकामें दो शिविरोंका सफलतापूर्वक संचालन कर २८ अप्रैलको जब गुरूजी बम्बई लौट रहे थे तो ६–७ घंटेके लिए मद्रास रुक पाए और इस प्रकार अपनी वृद्धा माँके साथ साधनाकर उन्हें धर्मबल प्रदान करते हुए उनकी सेवा कर सके। उस समय अनेक स्थानीय साधकोंने भी साथ बैठकर साधना की। अत्यंत कमजोरीके बावजूद भी उन्होंने सबके साथ एक घंटे अधिष्ठानमें बैठकर धर्मलाभ लिया और अपनी साधना प्रियताका अनूठा परिचय दिया।

१३ मईकी सायं अचानक कमजोरी बहुत बढ़ गई। अस्पताल ले जाया गया परन्तु अत्यधिक जर्जरता व मरणासन्न अवस्था देखकर उन्हें घर वापस लाना ही उचित समझा गया। घर लौटनेपर १४ मईको दिनमें १० बजे गुरूजीको उनकी नाजुक स्थितिकी सूचना टेलीफोन द्वारा इगतपुरी दी गयी। उससे पहले दिन शामको ही यहाँ इतनी बड़ी संख्यावाला शिविर अरंभ हो चुकाथा। माँ सयामा भी नहीं थी। कोई अन्य शिविर-संचालन कर नहीं सकता था। इतने लोगोंको निराशकर धर्मलाभसे वंचित करना उपयुक्त नहीं था। अतः पू. गुरुजीने यही निर्णय किया कि धम्मगिरिपर रहते हुएही माताजीको मंगल मैत्री देते रहें और शिविर-संचालनका उत्तरदायित्व निभाते रहें। उन्होंने तुरन्त मद्रास सूचना भेजी कि माताजीके इर्द-गिर्द शुद्ध धर्मका वातावरण बनाए रखा जाय। ऐसाही किया गया। गुरूजीकी धर्मभावनाकी टेप चलती रही और परिवारके साधक सदस्य समीप बैठकर साधना करते रहे। वातावरणके धर्मबलसे और उस तपस्विनीकी वर्षोंकी तपःपूत साधनाके बलसे यद्यपि शारीरिक बल क्षीण होता गया, ऑखे बंद रही पर भीतरकी चेतना कायम रही। कभी-कभी परिवारवालोंको आंशंका हो उठती कि कहीं बेहोश तो नहीं है तो जरासे छेड़ने परही तुरन्त ऑखें खोलकर उन्हें आश्वस्त कर देती कि वह भले बोल नहीं रही, पर भीतरसे सचेत है। यह अवस्था सायंकाल ६ बजे तक चलती रही। जब देह–च्युतिका अंतिम क्षण समीप आया तो उन्होंने एक बार स्वतः ऑखें खोली और सुगति निमित्त देखकर शांत चित्तसे अंतिम सांस छोड़ दी। मृत्युके बादभी चेहरेकी शांति दर्शनीय थी। रातके १० बजे शरीर–दाह किया गया। पू. गुरूजीकी मंगलमयी जननीका जीवन जितना आदर्श था, मृत्युभी उसीके अनुरूप आदर्शही हुई।

दिवंगतके इस परम पवित्र जीवनसे हम सभीको प्रेरणा प्राप्त हो तथा हम भी अपने दैनिक जीवनमें विपश्यनाका नियमित अभ्यास करते हुए इहलोक तथा परलोक दोनोंको सुखमय बना सकें।

– संपादक

आगामी शिविर

शिविर क्रमांक १७८ हैदराबाद (वि. अं. सा. के.) दि. ८-६-८० से १९-६-८० तक (हिन्दी)

लघु शिविर ,, ,, दि. १९-६-८० से २४-६-८० तक (केवल पुराने साधकों के लिए)

शिविर क्रमांक १७९ ,, ,, दि. २४-६-८० से ५-७-८० तक (हिन्दी)

(८ जून से ५ जुलाई तकके लंबे शिविरके लिए पुराने साधक आवेदन पत्र-भेज सकते हैं।)

संपर्क : १- श्री रतिलाल एम. मेहता, "विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय साधना केन्द्र" १२·६ कि. मी., नागार्जुन सागर रोड, कुसुम नगर, हैदराबाद-५०० ०३५ (आं. प्र.) फोन - ५९२५९. **अथवा**

२- श्री पूरनमल अग्रवाल, द्वारा-होटल राजधानी, सिद्दिअम्बर बाजार, हैदराबाद-५०० ०१२ (आं. प्र.) फोन-५७५७१.

इससे आगे के शिविर Switzerland, Canada, Chicago (U.S.A.) Mendocino (U. S.) तथा Sydney & Perth (Australia) में निश्चित हैं। विवरण अगली पत्रिका में पुनः प्रकाशित किए जा सकेंगे। इस बीच धम्मगिरि से संपर्क करके मालूम कर सकते हैं।

सूचना : १) कृपया साधना शिविर में शामिल होने से पूर्व शिविर-व्यवस्थापक के पास अपना नाम रजिस्टर करा लें। **किसी कारणवश शिविर में सम्मिलित न हो सकते हों तो कृपया पर्याप्त समय रहते सूचित करें ताकि किसी अन्य प्रत्याशी को स्वीकृति दी जा सके।**

२) अंग्रेजी शिविर में हिन्दी-प्रवचन सुनने लिए हिन्दी टेप की सुविधा उपलब्ध रहती है।

३) सभी शिविरार्थियों को शिविर की पूरी अवधि पर्यंत शिविर-स्थल पर ही रहना होता है और संपूर्ण मौन तथा "अनुशासन-संहिता" का कड़ाई से पालन करना होता है। इसे ध्यान से पढ़-समझकर ही आवेदन-पत्र भेजना चाहिए।

तार : ADDITION **मेसर्स नानजी नागसी शाह** फोन : ४१५५१/४१५५२

पत्र पेटी क्रमांक - ३११, इतवारी, नागपुर-४४० ००२.

की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

झोंको आयो मौत को, झड़्यो पुरानो पान।
उगणो, बढणो, मुरझणो, मरणो अमिट बिधान ॥
बीज फूट पोधो हुयो, तरुवर घेर घमेर।
बिरध हुयो, लकड़ा कट्या, हुयो राखको ढेर ॥
काळी छाया मौत की, आवै चादर तान।
अमर न कोई रह सकै, कंस बचै ना कान्ह ॥
रावण बचै न राम ही, काल र यो गटकाय।
बुद्ध बचै न देवदत्त, जनम लियो सो जाय ॥
नाना बरणी बिहगड़ा, रात बसेरो रूक्ख।
पौ फाटी, दिस-दिस उड्या, ईं मह क्याँको दुक्ख ॥
बिना बुलायां आवियो, बिन पूछ्यां ही जाय।
आतै जातै जीव को, हरख सोक कछु नांय ॥

दोहे धरम के

नारी हो या पुरुष हो, युवा, वृद्ध या बाल।
आठ पहर चौसठ घड़ी, पल पल निगले काल ॥
सब माटी की पुतलियाँ, मिलें राख या रेत।
साथ चले बस धरम ही, पुण्यलोक सुख हेत ॥
सफल होय यह जिन्दगी, मानव का तन पाय।
आए सब रोते हुए, हँसते हँसते जायँ ॥
हम भी मुसकाते चलें, दुनिया भी मुसकाय।
आए हैं सो जायंगे, दो दिन ढोल बजाय ॥
इस नश्वर संसार में, दो दिन का ही खेल।
तब तक दीपक से जलें, जब तक बाती तेल ॥
ना मरनेका भय हमें, ना जीने का लोभ।
समय पके तो चल पड़ें, होय न मन में क्षोभ ॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : **रामप्रताप यादव**, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई २३. टेलीफोन : ३१३५१०. ● मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलिफोन ८८२५१ ●

पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रू. ५००/-, चौथाई पृष्ठ रू. २५० /- ● वार्षिक शुल्क रू. ५/-, आजीवन शुल्क रू. ५१/-

---

"विपश्यना"

पो. रजि. नं. NSK-64

License No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)

To